ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

जीवन वृत्तान्त

श्री गुरू हरिकिशन साहब जी

लेखक : स. जसबीर सिंघ

क्रांतिकारी गुरू नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Website : www.sikhworld.info

जीवन वृत्तान्त श्री गुरू हरिकिशन साहब जी

श्री (गुरू) हरि किशन साहब जी का प्रकाश (जन्म) श्री गुरू हरिराय जी के गृह माता किशन कौर की कोख से संवत 1713 सावन माह शुक्ल पक्ष 8 को तदानुसार 23 जुलाई 1656 को कीरतपुर, पँजाब हुआ। आप हरिराय जी के छोटे पुत्र थे। आपके बड़े भाई रामराय आप से 10 वर्ष बड़े थे।

श्री हरिकिशन जी का बाल्यकाल अत्यन्त लाड़ प्यार से व्यतीत हुआ। परिवारजन तथा अन्य निकटवर्ती लोगों को बाल हरिकिशन जी के भोले भाले मुख मण्डल पर एक अलौकिक आभा छाई दिखाई देती थी, नेत्रों में करूणा के भाव दृष्टिगोचर होते थे। छोटे से व्यक्तित्त्व में गजब का ओज रहता था। उनका दर्शन करने मात्र से एक आत्मिक सुख सा मिलता था।

गुरू हरिराय अपने इस नन्हें से बेटे की ओर दृष्टि डालते तो उन्हें प्रतीत होता था कि जैसे प्रभु स्वयँ मानव रूप धारण कर किसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस घर में पधारे हो। भाव श्री हरिकिशन में उन्हें ईश्वरीय पूर्ण प्रतिबिम्ब नजर आता। वह हरिकिशन के रूप में ऐसा पुत्र पाकर परम सन्तुष्ट थे।

गुरू हरिराय जी ने दिव्य दृष्टि से अनुभव किया कि शिशु हरिकिशन की कीर्ति भविष्य में विश्वभर म फैलेगी । अत: इस बालक का नाम लोग आदर और श्रृद्धा से लिया करेंगे। शिशु का भविष्य उज्ज्वल है। यह उन्हें दृष्टिमान हो रहा था और उनका विश्वास फलीभूत हुआ। श्री हरिकिशन जी ने गुरू पद की प्राप्ति के पश्चात् अपना नाम इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित करवा दिया।

गुरूगद्दी की प्राप्ति

श्री गुरू हरिराय जी की आयु केवल 31 वर्ष आठ माह की थी तो उन्होंने आत्मज्ञान से अनुभव किया कि उनकी श्वासों की पूँजी समाप्त होने वाली है। अत: उन्होंने गुरू नानक देव जी की गद्दी का आगामी उत्तराधिकारी के स्थान पर सिक्खों के अष्टम गुरू के रूप में श्री हरिकिशन जी की नियुक्ति की घोषणा कर दी।

इस घोषणा से सभी को प्रसन्नता हुई। श्री हरिकिशन जी उस समय केवल पाँच वर्ष के थे। फिर भी गुरू हरिराय जी की घोषणा से किसी को मतभेद नहीं था। जन साधारण अपने गुरूदेव की घोषणा में पूर्ण आस्था रखते थे। उन्हें विश्वास था कि श्री हरिकिशन के रूप में अष्टम गुरू सिक्ख सम्प्रदाय का कल्याण ही करेंगे। परन्तु गुरू हरिराय जी की इस घोषणा से उनके बड़े पुत्र रामराय को बहुत क्षोभ हुआ। रामराय जी को गुरूदेव ने निष्कासित किया हुआ था और वह उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र की तलहटी में एक नया नगर बसाकर निवास कर रहे थे। जिस का नाम कालान्तर में देहरादून प्रसिद्ध हुआ है। यह स्थान औरंगजेब ने उपहार स्वरूप दिया था।

रामराय भले ही अपने पिता जी के निर्णय से खुश नहीं था किन्तु वह जानता था कि गुरूनानक की गद्दी किसी की धरोहर नहीं, वह तो किसी योग्य पुरूष के लिए सुरक्षित रहती है और उसका चयन बहुत सावधानी से किया जाता है।

श्री गुरू हरिराय जी अपने निर्णय को कार्यान्वित करने में जुट गये। उन्होंने एक विशाल समारोह का आयोजन किया, जिसमें सिक्ख परम्परा अनुसार विधिवत् हरिकिशन को तिलक लगवा कर गुरू गद्दी पर प्रतिष्ठित कर दिया। यह शुभ कार्य आश्विन शुक्ल पक्ष 10 संवत 1718 तदानुसार

इसके पश्चात आप स्वयँ कार्तिक संवत 1718 को परलोक सिधार गए। इस प्रकार समस्त सिक्ख संगत नन्हें से गुरू को पाकर प्रसन्न थी।

नन्हें गुरु के नेतृत्त्व में

श्री गुरू हरिराय जी के ज्योति-ज्योत समा जाने के पश्चात् श्री गुरू हरिकिशन साहब जी के नेतृत्त्व में कीरतपु में सभी कार्यक्रम यथावत् जारी थे। दीवान सजता था संगत जुड़ती थी। कीर्तन भजन होता था। पूर्व गुरूजनों की वाणी उच्चारित की जाती थी, लंगर चलता था और जन साधारण बाल गुरू हरिकिशन के दर्शन पाकर सन्तुष्टि प्राप्त कर रहे थे।

गुरू हरिकिशन जी भले ही साँसारिक दृष्टि से अभी बालक थे परंतु आत्मिक बल अथवा तेजस्वी की दृष्टि से पूर्ण थे, अत: अनेक सेवादार उनकी सहायता के लिए नियुक्त रहते थे। माता श्रीमती किशनकौर जी सदैव उनके पास रह कर उनकी सहायता में तत्पर रहती थी। भले ही वह कोई सक्रिय भूमिका नहीं निभा रहे थे तो भी भविष्य में सिक्ख पंथ उनसे बहुत सी आशाएं लगाए बैठा था। उनकी उपस्थिति का कुछ ऐसा प्रताप था कि सभी कुछ सुचारू रूप से संचालित होता जा रहा था। समस्त संगत और भक्तजनों का विश्वास था कि एक दिन बड़े होकर गुरू हरिकिशन जी उनका सफल नेतृत्त्व करेंगे और उनके मार्ग निर्देशन में सिक्ख आन्दोलन दिनों दिन प्रगति के पथ

पर अग्रसर होता चला जाएगा।

कुष्ठि का आरोग्य होना

श्री गुरू हरिकिशन जी की स्तुति कस्तूरी की तरह चारों ओर फैल गई। दूर-दराज से संगत बाल गुरू के दर्शनों को उमड़ पड़ी। जनसाधारण को मनो-कल्पित मुरादें प्राप्त होने लगी। स्वाभाविक ही था कि आपके यश के गुण गायन गांव-गांव, नगर-नगर होने लगे। विशेष कर असाध्य रोगी आपके दरबार में बड़ी आशा लेकर दूर दूर से पहुँचते। आप किसी को भी निराश नहीं करते थे। आप का समस्त मानव कल्याण एक मात्र उद्देश्य था। एक दिन कुछ ब्राह्मणों द्वारा सिखाये गये कुष्ठ रोगी ने आपकी पालकी के आगे लेट कर ऊँचे स्वर में आपके चरणों में प्रार्थना की कि हे गुरूदेव ! मुझे कुष्ठ रोग से मुक्त करें। उसके करूणामय रूदन से गुरूदेव जी का हृदय दया से भर गया, उन्होंने उसे उसी समय अपने हाथ का रूमाल दिया और वचन किया कि इस रूमाल को जहाँ जहाँ कुष्ठ रोग है, फेरो, रोगमुक्त हो जाओगे। ऐसा ही हुआ। बस फिर क्या था ? आपके दरबार के बाहर दीर्घ रोगियों का तांता ही लगा रहता था। जब आप दरबार की समाप्ति के बाद बाहर खुले आंगन में आते तो आपकी दृष्टि जिस पर भी पड़ती, वह निरोग हो जाता। यूं ही दिन व्यतीत होने लगे।

श्री गुरू हरिकिशन जी को सम्राट द्वारा निमन्त्रण

दिल्ली में रामराय जी ने अफवाह उड़ा रखी थी कि श्री गुरू हरिकिशन अभी नन्हें बालक ही तो हैं, उससे गुरू गद्दी का कार्यभार नहीं सम्भाला जायेगा। किन्तु कीरतपुर पँजाब से आने वाले समाचार इस भ्रम के विपरीत संदेश दे रहे थे। यद्यपि श्री हरिकिशन जी केवल पाँच साढ़े पाँच साल के ही थे तदापि उन्होंने अपनी पूर्ण विवेक बुद्धि का परिचय दिया और संगत का उचित मार्ग दर्शन किया। परिणाम स्वरूप रामराय की अफवाह बुरी तरह विफल रही और श्री गुरू श्री हरिकिशन जी का तेज प्रताप बढ़ता ही चला गया। इस बात से तंग आकर रामराय ने सम्राट औरंगजेब को उकसाया कि वह श्री हरिकिशन जी से उनके आत्मिक बल के चमत्कार देखे। किन्तु बादशाह को इस बात में कोई विशेष रूचि नहीं थी। वह पहले रामराय जी से बहुत से चमत्कार जो कि उन्होंने एक मदारी की तरह दिखाये थे, देख चुका था। अत: बात आई गई हो गई। कितु रामराय को ईर्ष्यावश शांति कहाँ ? वह किसी न किसी बहाने अपने छोटे भाई के मुकाबले बड़प्पन दर्शाना चाहता था। अवसर मिलते ही एक दिन रामराय ने बादशाह औरंगजेब को पुन: उकसाया कि मेरा छोटा भाई गुरू नानकदेव की गद्दी का आठवां उत्तराधिकारी है, स्वाभाविक ही है कि वह सर्वकला समर्थ होना चाहिए क्योंकि उसे गुरू ज्योति प्राप्त हुई है। अत: वह जो चाहे कर सकता है किन्तु अभी अल्प आयु का बालक है, इसलिए आपको उसे दिल्ली बुलवा कर अपने हित में कर लेना चाहिए, जिससे प्रशासन के मामले में आपको लाभ हो सकता है।

सम्राट को यह बात बहुत युक्तिसंगत लगी। वह सोचने लगा कि जिस प्रकार रामराय मेरा मित्र बन गया है। यदि श्री हरिकिशन जी से मेरी मित्रता हो जाए तो कुछ असम्भव बातें सम्भव हो सकती हैं जो बाद में प्रशासन के हित में सिद्ध हो सकती हैं क्योंकि इन गुरू लोगों की देश भर में बहुत मान्यता है।

अब प्रश्न यह था कि श्री गुरू हरिकिशन जी को दिल्ली कैसे बुलवाया जाये। इस समस्या का समाधान भी कर लिया गया कि हिन्दू को हिन्दू द्वारा आदरणीय निमन्त्रण भेजा जाए, शायद बात बन जायेगी। इस युक्ति को क्रियाविंत करने के लिए उसने मिरज़ा राजा जयसिंह को आदेश दिया कि तुम गुरू घर के सेवक हो। अत: कीरतपुर से श्री गुरू हरिकिशन जी को हमारा निमंत्रण देकर दिल्ली ले आओ। मिरज़ा राजा जय सिंह ने सम्राट को आश्वासन दिया कि वह यह कार्य सफलता पूर्वक कर देगा और उसने इस कार्य को अपने विश्वास पात्र दीवान परसराम को सौंपा। वह बहुत योग्य और बुद्धिमान पुरूष था। इस प्रकार राजा जय सिंह ने अपने दीवान परसराम को पचास घोड़ सवार दिये और कहा कि मेरी तरफ से कीरतपुर में श्री गुरू हरिकिशन को दिल्ली आने के लिए निवेदन करें और उन्हें बहुत आदर से पालकी में बैठाकर पूर्ण सुरक्षा प्रदान करते हुए लायें। जैसे कि 1660 ईस्वी में औरंगजेब ने श्री गुरू हरिराय जी को दिल्ली आने के लिए आमंत्रित किया था वैसे ही अब 1664 ईस्वी में दूसरी बार श्री गुरू हरिकिशन जी को निमंत्रण भेजा गया। सिक्ख सम्प्रदाय के लिए यह परीक्षा का समय था। श्री गुरू अर्जुन देव भी जहाँगीर के राज्यकाल में लाहौर गये थे और श्री गुरू हरिगोविद साहब भी ग्वालियर में गये थे। विवेक बुद्धि से श्री गुरू हरि किशन जी ने सभी तथ्यों पर विचारविमर्श किया। उन दिनों आपकी आयु 7 वर्ष की हो चुकी थी। माता किशनकौर जी ने दिल्ली के निमंत्रण को बहुत गम्भीर रूप में लिया। उन्होंने सभी प्रमुख सेवकों को सत्तर्क किया कि निर्णय लेने में कोई चूक नहीं होनी चाहिए। गुरूदेव ने दीवान परस राम के समक्ष एक शर्त रखी कि वह सम्राट औरंगजेब से कभी नहीं मिलेंगे और उनको कोई भी बाध्य नहीं करेगा कि उनके बीच कोई विचार गोष्टि का आयोजन हो। परसराम को जो काम सौंपा गया था, वह केवल गुरूदेव को दिल्ली ले जाने का कार्य था, अत: यह शर्त स्वीकार कर ली गई।

दीवान परसराम ने माता किशनकौर को सांत्वना दी और कहा - आप चिंता न करें। मैं स्वयं गुरूदेव की पूर्ण सुरक्षा के लिए तैनात रहूँगा। तत्पश्चात् दिल्ली जाने की तैयारियाँ होने लगी। जिसने भी सुना कि गुरू श्री हरिकिशन जी को औरंगजेब ने दिल्ली बुलवाया है, वही

उदास हो गया। गुरूदेव की अनुपस्थिति सभी को असहाय थी किन्तु सभी विवश थे। विदाई के समय अपार जनसमूह उमड़ पड़ा। गुरूदेव ने सभी श्रद्धालुओं को अपनी कृपादृष्टि से कृतार्थ किया और दिल्ली के लिए प्रस्थान कर गये।

एक ब्राह्मण की शंका का समाधाान

कीरतपुर से दिल्ली पौने दौ सौ मील दूर स्थित है। गुरूदेव के साथ भारी संख्या में संगत भी चल पड़ी। इस बात को ध्यान में रखकर आप जी ने अम्बाला शहर के निकट पंजोखरा नामक स्थान पर शिविर लगा दिया और संगत को आदेश दिया कि आप सब लौट जायें। पंजोखरा गाँव के एक पंडित जी ने शिविर की भव्यता देखी तो उन्होंने साथ आये विशिष्ट सिक्खों से पूछा कि यहाँ कौन आये हैं ? उत्तर में सिक्ख ने बताया कि श्री गुरू हरिकिशन महाराज जी दिल्ली प्रस्थान कर रहे हैं, उन्हीं का शिविर है। इस पर पंडित जी चिढ़ गये और बोले कि द्वापर में श्री कृष्ण जी अवतार हुए हैं, उन्होंने गीता रची है। यदि यह बालक अपने आपको हरिकिशन कहलवाता है तो भगवत गीता के किसी एक श्लोक का अर्थ करके बता दे तो हम मान जायेंगे। यह व्यंग जल्दी ही गुरुदेव तक पहुंच गया। उन्होंने पंडित जी को आमंत्रित किया और उससे कहा - पंडित जी आपकी शंका निराधार है। यदि हमने आपकी इच्छा अनुसार गीता के अर्थ कर भी दिये तो भी आपके भ्रम का निवारण नहीं होगा क्योंकि आप यह सोचते रहेंगे कि बड़े घर के बच्चे हैं, सँस्कृत का अध्ययन कर लिया होगा इत्यादि। किन्तु हम तुम्हें गुरू नानक के घर की महिमा बताना चाहते हैं। अत: आप कोई भी व्यक्ति ले आओ जो तुम्हें अयोग्य दिखाई देता हो, हम तुम्हें गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी होने के नाते उस से तुम्हारी इच्छा अनुसार गीता के अर्थ करवा कर दिखा देंगे। चुनौती स्वीकार करने पर समस्त क्षेत्र में जिज्ञासा उत्पन्न हो गई कि गुरुदेवे पंडित को किस प्रकार संतुष्ट करते हैं। तभी पंडित कृष्णलाल एक झींवर (पानी ढ़ोने वाला) को साथ ले आया जो बैरा और गूँगा था। वह गुरूदेव जी से कहने लगा कि आप इस व्यक्ति से गीता के श्लोकों के अर्थ करवा कर दिखा दे। गुरूदेव ने झींवर छज्जूराम पर कृपा दृष्टि डाली और उसके सिर पर अपने हाथ की छड़ी मार दी। बस फिर क्या था ? छज्जूराम झींवर बोल पड़ा और पंडित जी को सम्बोधान करके कहने लगा - पंडित कृष्ण लाल जी, आप गीता के श्लोक उच्चारण करें। पंडित कृष्ण लाल जी आश्चर्य में चारों ओर झांकने लगा। उन्हें विवशता के कारण भगवत गीता के श्लोक उच्चारण करने पड़े। जैसे ही झींवर छज्जू राम ने पंडित जी के मुख से श्लोक सुना, वह कहने लगा कि पंडित जी आपके उच्चारण अशुद्व हैं, मैं आपको इसी श्लोक का शुद्व उच्चारण सुनाता हूँ और फिर अर्थ भी पूर्ण रूप में स्पष्ट करूँगा। छज्जूराम ने ऐसा कर दिखाया। पंडित कृष्ण लाल का संशय निवृत्त्त हो गया। वह गुरू चरणों में बार बार नमन करने लगा।

तब गुरूदेव जी ने उसे कहा - आपको हमारी शारीरिक आयु दिखाई दी है, जिस कारण आपको भ्रम हो गया है, वास्तव में ब्रह्मज्ञान का शारीरिक आयु से कोई सम्बन्ध नहीं होता। यह अवस्था पूर्व संस्कारों के कारण किसी को भी किसी आयु में प्राप्त हो सकती है। आपने सँस्कृत भाषा के श्लोकों के अर्थो को कर लेने मात्र से पूर्ण पुरूष होने की कसौटी मान लिया है, जबकि यह विचारधारा ही गलत है। महापुरूष होना अथवा शाश्वत ज्ञान प्राप्त होना, भाषा ज्ञान की प्राप्ति से ऊपर की बात है। आध्यात्मिक दुनिया में ऊँची आत्मिक अवस्था उसे प्राप्त होती है, जिसने निष्काम, समस्त प्राणीमात्र के कल्याण के कार्य किये हों अथवा जो प्रत्येक श्वास को सफल करता है। प्रभु चिन्तन मन में व्यस्त रहता है।

इस मार्मिक प्रसंग की स्मृति में आज भी पंजोखरा गाँव में श्री हरिकिशन जी के कीर्ति स्तम्भ के रूप में एक भव्य गुरूद्वारा बना हुआ है।

श्री गुरू हरिकिशन जी दिल्ली पधाारे

श्री गुरू हरिकिशन जी की सवारी जब दिल्ली पहुँची तो राजा जय सिंह ने स्वयं उनकी आगवानी की और उन्हें अपने बंगले में ठहराया। जहाँ उनका भव्य स्वागत किया गया। राजा जय सिंह के महल के आसपास के क्षेत्र का नाम जयसिंह पुरा था। जयसिंह की रानी के हृदय में गुरूदेव जी के दर्शनों की तीव्र अभिलाषा थी, किन्तु रानी के हृदय में एक संशय ने जन्म लिया। उसके मन में एक विचार आया कि यदि बालगुरू पूर्ण गुरू हैं तो मेरी गोदी में बैठे। उसने अपनी इस परीक्षा को किर्यान्वित करने के लिए बहुत सारी सखियों को भी आमंत्रित कर लिया था। जब महल में गुरूदेव का आगम हुआ तो वहाँ बहुत बड़ी संख्या में महिलाएं सजधाज कर बैठी हुई गुरूदेव जी की प्रतीक्षा कर रही थीं। गुरूदेव सभी स्त्रियों को अपनी छड़ से स्पर्श करते हुए कहते गये कि यह भी रानी नहीं, यह भी रानी नहीं, अन्त में उन्होंने रानी को खोज लिया और उसकी गोद में जा बैठे। तद्पश्चात् उसे कहा - आपने हमारी परीक्षा ली है, जो कि उचित बात नहीं थी।

औरंगजेब को जब सूचना मिली कि आठवें गुरू श्री हरिकिशन जी दिल्ली राजा जय सिंह के बंगले पर पधारे हैं तो उसने उनसे मुलाकात करने का समय निश्चित करने को कहा - किन्तु श्री हरिकिशन जी ने स्पष्ट इन्कार करते हुए कहा - हमने दिल्ली आने से पूर्व यह शर्त रखी थी कि हम औरंगजेब से भेंट नहीं करेंगे। अत: वह हमें मिलने का कष्ट न करें। बादशाह को इस उत्तर की आशा नहीं थी। इस कोरे उत्तर को सुनकर वह बहुत निराश हुआ और दबाव डालने लगा कि किसी न किसी रूप में गुरूदेव को मनाओं, जिससे एक भेंट सम्भव हो सके।

दिल्ली में महामारी का आतंक

श्री गुरू हरिकिशन जी के दिल्ली आगमन के दिनों में वहाँ हैजा रोग फैलता जा रहा था, नगर में मृत्यु का ताण्डव नृत्य हो रहा था, स्थान स्थान पर मानव शव दिखवाई दे रहे थे। इस आतंक से बचने के लिए लोगों ने तुरन्त गुरू चरणों में शरण ली और गुहार लगाई कि हमें इन रोगों से मुक्ति दिलवाई जाये।

गुरूदेव तो जैसे मानव कल्याण के लिए ही उत्पन्न हुए थे। उनका कोमल हृदय लोगों के करूणामय रूदन से द्रवित हो उठा। अत: उन्होंने सभी को सांत्वना दी और कहा - प्रभु भली करेंगे। आप सब उस सर्वशक्तिमान पर भरोसा रखें और हमने जो प्रार्थना करके जल तैयार किया है, उसे पीओ, सभी का कष्ट निवारण हो जायेगा। सभी रोगियों ने श्रद्धापूर्वक गुरूदेव जी के कर-कमलों से जल ग्रहण कर, अमृत जान कर पी लिया और पूर्ण स्वस्थ हो गये। इस प्रकार रोगियों का गुरू दरबार में तांता लगने लगा। यह देखकर गुरूदेव जी के निवास स्थान के निकट एक बाउड़ी तैयार की गई, जिसमें गुरूदेव जी द्वारा प्रभु भक्ति से तैयार जल डाल दिया जाता, जिसे लोग पी कर स्वास्थ्य लाभ उठाते।

जैसे ही हैजे का प्रकोप समाप्त हुआ, चेचक रोग ने बच्चों को घेर लिया। इस संक्रामक रोग ने भयंकर रूप धारण कर लिया। माताएं अपने बच्चों को अपने नेत्र के सामने मृत्यु का ग्रास बनते हुए नहीं देख सकती थी। गुरू घर की महिमा ने सभी दिल्ली निवासियों को गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी श्री हरिकिशन जी के दर पर खड़ा कर दिया। इस बार नगर के हर श्रेणी तथा प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग थे। लोगों की श्रद्धा भक्ति रंग लाती, सभी को पूर्ण स्वास्थ्य लाभ मिला। गुरू घर में प्रात:काल से रोगियों का आगमन आरम्भ हो जाता, सेवादार सच्चे मन से चरणामृत रोगियों में वितरित कर देते, स्वाभाविक ही था कि लोगों के हृदय में श्री गुरू हरिकिशन जी के प्रति श्रद्धा बढ़ती चली गई। इस प्रकार बाल गुरू की स्तुति चारों ओर फैलने लगी और उन पर जनसाधारण की आस्था और भी सुदृढ़ हो गई।

देहावसान

श्री गुरु हरिकिशन जी ने अनेकों रोगियों को रोग से मुक्त दिलवाई। आप बहुत ही कोमल व उद्धार हृदय के स्वामी थे। आप किसी को भी दुखी देख नहीं सकते थे और न ही किसी की आस्था अथवा श्रद्धा को टूटता हुआ देख सकते थे। असंख्य रोगी आपकी कृपा के पात्र बने और पूर्ण स्वास्थ्य लाभ उठाकर घरों को लौट गये। यह सब जब आपके भाई रामराय ने सुना तो वह कह उठा कि श्री गुरू हरिकिशन पूर्व गुरूजनों के सिद्धांतों के विरूद्ध आचरण कर रहे हैं। पूर्व गुरूजन प्रकृति के कार्यो में हस्ताक्षेप नहीं करते थे और न ही सभी रोगियों को स्वास्थ्य लाभ देते थे। यदि वह किसी भक्तजन पर कृपा करते भी थे तो उन्हें अपने औषद्यालय की दवा देकर उसका उपचार करते थे। एक बार हमारे दादा श्री गुरदिता जी ने आत्म बल से मृत गाय को जीवित कर दिया था तो हमारे पितामा जी ने उन्हें बदले में शरीर त्यागने के लिए संकेत किया था। ठीक इसी प्रकार दादा जी के छोटे भाई श्री अटल जी ने सांप द्वारा काटने पर मृत मोहन को जीवित किया था तो पितामा श्री हरिगोविद जी ने उन्हें भी बदले में अपने प्राणों की आहुति देने को कहा था। ऐसी ही एक घटना कुछ दिन पहले हमारे पिता श्री हरिराय जी के समय में भी हुई है, उनके दरबार में एक मृत बालक का शव लाया गया था, जिस के अभिभावक बहुत करूणामय रूदन कर रहे थे। कुछ लोग दयावश उस शव को जीवित करने का आग्रह कर रहे थे और बता रहे थे कि यदि यह बालक जीवित हो जाता है तो गुरू घर की महिमा खूब बढ़ेगी किन्तु पिता श्री ने केवल एक शर्त रखी थी कि जो गुरू घर की महिमा को बढ़ता हुआ देखना चाहता है तो वह व्यक्ति अपने प्राणों का बलिदान दे जिससे मृत बालक को बदले में जीवन दान दिया जा सके। उस समय भाई भगतू जी के छोटे सुपुत्र जीवन जी ने अपने प्राणों की आहुति दी थी और वह एकांत में शरीर त्याग गये थे, जिसके बदले में उस मृत ब्राह्मण पुत्र को जीवनदान दिया गया था। परन्तु अब श्री हरिकिशन बिना सोच विचार के आत्मबल का प्रयोग किये जा रहे हैं। जब यह बात श्री गुरू हरिकिशन जी के कानों तक पहुंची तो उन्होने इस बात को बहुत गम्भीरता से लिया। उन्होंने स्वयं चित्त में भी सभी घटनाओं पर क्रमवार एक दृष्टि डाली और प्रकृति के सिद्धान्तों का अनुसरण करने का मन बना लिया, जिसके अन्तर्गत आपने अपनी जीवन लीला रोगियों पर न्योछावर करते हुए अपने प्राणों की आहुति देने का मन बना लिया।

बस फिर क्या था ? आप अकस्मात् चेचक रोग से ग्रस्त दिखाई देने लगे। जल्दी ही आपके पूरे बदन पर फुंसियां दिखवाई देने लगी और तेज़ बुखार होने लगा। सक्रांमक रोग होने के कारण आपको नगर के बाहर एक विशेष शिविर में रखा गया किन्तु रोग का प्रभाव तीव्र गति पर छा गया। आप अधिकांश समय बेसुध पड़े रहने लगे। जब आपको चेतन अवस्था हुई तो कुछ प्रमुख सिक्खों ने आपका स्वास्थ्य जानने की इच्छा से आपसे बातचीत की तब आपने संदेश दिया कि हम यह नश्वर शरीर त्यागने जा रहे हैं, तभी उन्होंने आपसे पूछा कि आपके पश्चात् सिक्ख संगत की अगुवाई कौन करेगा ? इस प्रश्न के उत्तर में अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति वाली परम्परा के अनुसार कुछ सामग्री मंगवाई और उस सामग्री को थाल में सजाकर सेवक गुरूदेव के पास ले गये। आपने अपने हाथ में थाल लेकर पाँच बार घुमाया मानों किसी व्यक्ति की आरती उतारी जा रही हो और कहा बाबा बसे बकाले ग्राम- (बाबा बकाले नगर में हैं)। इस प्रकार सांकेतिक संदेश

देकर आप ज्योतिजोत समा गये।

श्री गुरू हरिकिशन साहब जी का निधान हो गया है । यह समाचार जँगल में आग की तरह समस्त दिल्ली नगर में फैल गया और लोग गुरूदेव जी के पार्थिव शरीर के अन्तिम दर्शनों के लिए आने लगे। यह समाचार जब बादशाह औरंगजेब को मिला तो वह गुरूदेव जी के पार्थिव शरीर के दर्शनों के लिए आया। जब वह उस तम्बू में प्रवेश करने लगा तो उसका सिर बहुत बुरी तरह से चकराने लगा किन्तु वह बलपूर्वक शव के पास पहुँच ही गया, जैसे ही वह चादर उठा कर गुरूदेव जी के मुखमण्डल देखने को लपका तो उसे किसी अदृश्य शक्ति ने रोक लिया और विकराल रूप धार कर भयभीत कर दिया। सम्राट उसी क्षण चीखता हुआ लौट गया।

यमुना नदी के तट पर ही आप की चिता सजाई गई और अन्तिम विदाई देते हुए आपके नश्वर शरीर की अन्त्येष्टि क्रिया सम्पन्न कर दी गई। आप बाल आयु में ही ज्योतिजोत समा गये थे। इसलिए इस स्थान का नाम बाल जी रखा गया।

आपकी आयु निधान के समय 7 वर्ष 8 मास की थी। आपके शरीर त्यागने की तिथि 16 अप्रैल सन् 1664 तदानुसार 3 वैशाख संवत 1721 थी ।